ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 102-04**

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-I, Issues-35, YEAR-Jan-Mar. 2025

जाति एवं अस्पृश्यता की उत्पत्ति

डॉ0 अनीता कुमारी

असिस्टेन्ट प्रोफेसर–समाजशास्त्र विभाग, एस0 एम0 पी0 कॉलेज, फतेहपुर–गया (बिहार) भारत

Received-04.02.2025, Revised-12.02.2025, Accepted-18.02.2025 **E-mail : akumari20146@gmail.com**

सारांशः ***जाति एवं अस्पृश्यता की उत्पत्ति भारत के प्राचीन भूतकाल में निहित है तथा पुरातात्विक एवं साहित्यिक स्त्रोतों द्वारा इसके जो प्रमाण प्रस्तुत किए जाते हैं, वे परिस्थितिजन्य है। फलस्वरूप अस्पृश्यता के प्राचीन इतिहास के पुनर्निर्माण के प्रयास में विद्वानों को कल्पना का सहारा लेने के लिए मजबूर होना पड़ा। इस सम्बन्ध में प्रभावशाली दृष्टिकोण जाति एवं अस्पृश्यता की उत्पत्ति को स्वयं आर्य एवं भारत में जिनके सम्पर्क में वे आए, उन लोगों के साथ स्वयं को सम्बद्ध करने की पद्धतियों में खो जाता है। आर्य जो अत्यधिक स्वचेतन एवं आपस में सम्बन्धित व्यक्तियों के पुंज थे, ने भारत में अपना अतिक्रमण उत्तर पूर्व से लगभग 1500 ई0 पू0 में किया। सदियों तक वे भारत के स्थानीय निवासियों से निरन्तर संघर्षरत रहे, जिन्हें वे सांस्कृतिक रूप से निम्न एवं सांस्कारिक रूप से गन्दा मानते थे। एक बार सैनिक तकनीक द्वारा अधीन हो जाने के बाद, उनमें से कुछ लोग उन क्षेत्रों में चले गये जहाँ आर्य नहीं थे तथा अन्य लोगों को आर्यों के प्रभुत्व वाले समाज में एक अलग एवं निम्न जाति के रूप में सम्मिलित कर लिया गया। उत्तर ऋग्वैदिक साहित्य में आदिम वनवासियों का काफी उदाहरण है, जिन्हें वर्जित क्षेत्रों में आर्य समाज के सीमान्त में रखा जाता था चाण्डाल इन्हीं में थे। हालांकि बाद के वैदिक युग में चाण्डाल अत्यधिक लांछित थे, किन्तु 600 ई0 पू0 एवं 200 ईसा पश्चात् के काल में अस्पृश्यता वास्तव में प्रकट हुई।***

कुंजीभूत शब्द– जाति एवं अस्पृश्यता, परिस्थितिजन्य, प्रभावशाली दृष्टिकोण, आर्य, अत्यधिक स्वचेतन, संघर्षरत, सांस्कारिक रूप

धर्मशास्त्र में तथा कौटिल्य के अर्थशास्त्र में चाण्डालों को अस्पृश्य माना गया है और अस्पृश्यता का मिश्रित जाति सिद्धान्त प्रस्तुत हुआ। ऋग्वेद में 'चर्मन्स' अर्थात् खाल या चाम शोधने वाला एवं वाज सनेयी संहिता में चाण्डल एवं पोल्कस नाम आये हैं। इसी प्रकार वाजसेनयी सहित एवं तैत्तिरीय ब्राह्मण में विड्लकार शब्द आया है परन्तु वैदिक शब्दों एवं नामों से केवल इतना भर ही कहा जा सकता है कि पैल्कस का संबंध विभत्सता से था एवं चाण्डाल शब्द भी वायु के दूषित करने के रूप में लिया जाता था। इससे यह तात्पर्य निकलता है कि पोल्कस एवं चाण्डाल जिस शमशान में रहते थे उससे घृणा उत्पन्न होती थी और वे वायु प्रदूषण एवं विभत्सता फैलाते थे।

सम्भवतः चाण्डाल इस काल की शुद्ध जातियों की निम्नतम शाखाओं में गिना जाता था। वह कुत्ते एवं सुअर के सदृश्य कहा गया है एवं अपवित्र माना गया है पणिनि एवं पतंजलि से ज्ञात होता है कि चाण्डालों एवं मृपतों को शूद्र में गिना जाता था परन्तु कालान्तर में क्रमशः शुद्रों एवं चाण्डालों आदि जातियों में अंतर पड़ता चला गया और बाद में ऐसा प्रतीत होता है कि ये चाण्डाल आदि जातियाँ अस्पृश्य जातियों का रूप ग्रहण करती चली गई, किन्तु फिर भी मनु स्मृति में ही इस सिद्धान्त तथा वर्ण का सिद्धान्त एवं व्यवसाय व अशुद्धता के अंशों पर आधारित जातियों के संस्तरण को शास्त्रीय रूप से प्रस्तुत किया गया।

मनु के मतानुसार अस्पृश्यता एक उच्च जाति एवं निम्न अथवा बहिष्कृत जाति के मध्य सम्बन्ध का दण्ड है। इस प्रकार के असमान युग्म से उत्पन्न बच्चे अस्पृश्य हो जाते हैं तथा दोनों अभिभावकों के मध्य जितना अधिक समाजिक अन्तराल होता है, उनके बच्चे भी उतने ही निम्न प्रस्थिति के होते हैं। यदि माता उच्च जाति की होती है तो इसके परिणाम और भी कठोर होते हैं इस प्रकार ब्राह्मण पिता एवं शुद्र माता की सन्तान निषाद् कहलाती हैं और वह मछुवारा बनता है। एक शुद्र पिता एवं ब्राह्मण माता की सन्तान चाण्डाल कहलाती है जो कि निम्नतम स्तर का माना जाता है। मनु के मतानुसार निम्नस्तरीय व्यवसाय अस्पृश्यता का कारण नहीं है वरण अस्पृश्यता एक निम्न एवं अशुद्ध व्यवसाय को व्यक्ति की नियति बना देती है। कालान्तर में प्रजातीय सम्मिश्रण को अशुद्धता के कारण के रूप में जोड़ा गया। मनु के बाद के समय में निम्न जातियों के सदस्यों में विभिन्न प्रजातियों एवं संस्कृतियों के लोगों की संख्या बढ़ती गई। 200 ई0 पूर्व पश्चात् अस्पृश्यता का चलन गहन होता गया। इस अन्य समूहों पर भी लागू किया जाने लगा तथा चाण्डाल शब्द का उपयोग मात्र एक सभी के लिए प्रयुक्त होने लगा जिन्हें आर्य समाज के लोग निम्नतम स्तर का मानते थे। जाति उत्पत्ति से सम्बन्धित उपरोक्त तथ्यों का संबंध उत्तर भारत से है।

दक्षिण भारत का साहित्यिक इतिहास यह कहता है कि जिन व्यक्तियों पर आर्यों ने विजय प्राप्त की थी, वे द्रविड़ थे, विजय के पश्चात् आर्य दक्षिण की ओर बढ़ते गये और वहाँ के स्थानीय लोगों को अपने अधिनस्थ कर लिया। बाद में जब अर्यों का प्रभाव दक्षिण में फैला तब वर्ण स्यवस्था एवं अस्पृश्यता वहाँ अस्तित्व में आया। प्रख्यात मानवशास्त्री जे0 एच0 हट्टन के मतानुसार अस्पृश्यता संस्कारगत अशुद्धता का परिणाम है। वे कहते हैं, "बाह्य जातियों की स्थिति की उत्पत्ति आंशिक रूप से धार्मिक एवं आंशिक रू॰ से सामाजिक प्रथा से सम्बन्धित है।" इस विषय में कोई शंका नहीं है, किन्तु अस्पृश्यता के विचार का उद्भव निषेधों में निहित है।

अस्पृश्यता की उत्पत्ति के विषय में स्टीफन फुक्स ने एक नए सिद्धान्त को प्रतिपादित किया है। उनके मतानुसार यह सच है कि जाति व्यवस्था जिस रूप में भारत में विकसित हुई, वह अन्यत्र विश्व में कहीं नही पाई जाती है तथा विश्व में कहीं अन्य जगह इतनी अधिक संख्या में अस्पृश्य नहीं पाए जाते हैं। आर्य और द्रविड़ जब–जब भारत आए तो वे अपने साथ विदेशी व्यक्तियों के प्रति वितृष्णा की भावना को भी लाए होंगे। उत्तर भारत के रास्ते धीमी गति से अग्रसर होने में आर्यों एवं पश्चिमी समुद्र तट के रास्ते दक्षिणी भारत की ओर बढ़ते द्रविड़ों का सामना यहाँ पहले से स्थापित लोगों के साथ हुआ होगा। यहाँ के स्थानीय लोगों ने या तो बिना किसी विरोध के उनको विजेता मान लिया होगा या भीषण युद्ध में वे हार गए होंगे। विजेता के रूप में इन लोगों ने विजित भारतीय लोगों पर अपने सांस्कृतिक मूल्यों एवं पूर्वाग्रहों को थोप दिया होगा। शारीरिक कार्य एवं प्रजातीय शुद्धता के प्रति अपने वंशानुगत दृष्टिकोण में एक नए आयाम, अर्थात् संस्कारगत शुद्धता को जोड़कर उन्होंने एक विशिष्ट हिन्दू जाति व्यवस्था विकसित की जो वैचरिक रूप में अस्पृश्यता की अवधारणा के साथ घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित थी।

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-I, Issues-35, YEAR-Jant-Mar. 2025

अस्पृश्यता का सम्भवतया सर्वाधिक प्रारम्भिक एवं सरल चित्र 'जातिच्यूति' शब्द में परिलक्षित होता है। इस दृष्टि के अनुसार अस्पृश्य होने का अर्थ है, हिन्दू संस्कृति एवं समाज की पहुँच से बाहर होना अर्थात् पूर्णतया संस्कृतिविहीन होना। जातिच्यूति में इस बात पर बल है कि "ब्राह्मण के पास संस्कृति होती है तथा अस्पृश्यों के पास नही" एबै दुबैय द्वारा जिन अस्पृश्यों की विवेचना की गई है, वे अपनी प्रस्थिति को स्वीकारते है तथा व्यवस्था की वैधता पर विश्वास करते हैं इसलिए उनके मस्तिष्क में समानता का कोई विचार नहीं आता है कि उसका भाग्य अपरिवर्तनीय नहीं है। जाति च्यूत का प्रारम्भिक चित्र जैसा की दुबैय ने खींचा। उसके अन्तर्गत डचच जाति के हिन्दुओं एवं निम्नतम अस्पृश्यों अथवा जातिच्युत के मध्य एक विशाल अन्तराल निहित है। यह शब्द स्वयं ही अन्तराल को व्यक्त करता है। हिन्दू में जाति इसकी सामाजिक एवं संस्कृतिक रुढ़ीयों द्वारा व्यवस्था से बाहर होते हैं।

अस्पृश्यता शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम विष्णु धर्मसूत्र एवं कात्यायन ने किया है। उनकी विवेचना में स्पष्ट है कि चाण्डालों, मलेच्छों, पारसीकों को अस्पृश्यों की श्रेणी में रखा गया है। अत्रि ने लिखा है कि यदि द्विज किसी चाण्डाल, पतित, मलेच्छ, सुरापात (शराबी), रजस्वला स्त्री को स्पर्श कर ले तो उन्हें बिना स्नान किए भोजन नहीं करना चाहिए। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि केवल चाण्डाल आदि जातियाँ ही अस्पृश्य की श्रेणी में नहीं आती थी वरन् धर्म और आचरण से पतित व्यक्ति, मलेच्छ, शराबी एवं विशेष स्थितियों में स्त्रियाँ भी अस्पृश्य समझी जाती थी। अर्थात् उस समय तक अस्पृश्यता अपनी प्रारंभिक अवस्था में जन्माजात आधार पर किसी जाति से नहीं जुड़ी थी, बल्कि बहुत हद तक हीनकर्म एवं विभत्स तथा गंदे कार्यों से जुड़ी समझी जाती थी। आजकल भी हम पाते हैं कि धोबियों, बाँस का काम करने वालों, मल्लाहों एवं नटों को कुछ प्रान्तों में अछूत नहीं माना जाता है।

अस्पृश्यता के उद्मग स्त्रोत– अस्पृश्यता के उद्गम स्त्रोंतों को देखें तो हम पाते हैं कि अस्पृश्यता की अवधारणा अति विस्तृत है एवं कुछ अंशों में निम्न तथ्यों से जुड़े हुए हैं:

भयंकर पापः अस्पृश्यता केवल जन्म से ही उत्पन्न होती, बल्कि भयंकर पापों एवं अपने दुष्कर्मों से लोग जाति निष्कासित कर दिये जाते थे एवं उन्हें अस्पृश्य समझा जाता था। मनु के अनुसार ब्राह्मण का हत्या करने वाले, ब्राह्मण के सोने की चोरी करने वाले, सुरापान करने वाले निकृष्ट लोगों को जाति से बाहर कर देना चाहिए। उनके साथ न कोई खाये, न उनका कोई स्पर्श करें, न उनकी कोई पुरोहिती करे, न कोई विवाह सम्बन्ध करे। वे लोग वैदिक धर्म से विहिन होकर संसार में विचारण करें। इस प्रकार महापाप और घोर चारित्रिक पतन के दण्ड स्वरूप अस्पृश्यता का जन्म हुआ।

धर्म संबंधी घृणाः जो लोग हिन्दू धर्म के विरोधी एवं निन्दक के रूप में प्रकट हुए उनके साथ भी धर्मों ने हिन्दुओं से अस्पृश्य और बहिष्कृत जैसा व्यवहार करने को कहा। धर्म संबंधी घृणा एवं विद्वेष के आधार को अपरार्क एवं स्मृति चन्द्रिका ने ब्राह्मण पुराण से उदाहरण लेकर कहा है– "बौद्धों, पाशुपतों, जैनों, लोकायतों, कपिलों, (सांख्यों) पतित एवं धर्मच्यूत ब्राह्मणों, शैवों एवं नास्तिकों को छूने पर वस्त्र के साथ पानी से स्थान कर लेना चाहिए।" इससे पता चलता है कि धर्मद्वेष के कारण जहाँ एक समय बौद्धो, जैनों, शैवों एवं नास्तिकों को अस्पृश्य बताया गया, समय व्यतीत होने के पश्चात आज ये लोग हिन्दू धर्म के प्रति वैसा विद्वेष नहीं दिखाते जैसा कि प्राचीन समय में दिखाते थे। अतः आज इन्हें अस्पृश्य नहीं समझा जाता।

शुद्धता की भावनाः आरम्भ में ब्राह्मणों में शुद्धि की भावना बहुत प्रबल थी। पुत्र उत्पन्न होने के 10 दिन की अवधि में पत्नी का स्पर्श, सूचक में स्पर्श, रजस्वला स्त्री से स्पर्श, शव स्पर्श आदि में वस्त्रों सहित स्नान करना बताया गया है। व्यवहार में पवित्रता एवं अपवित्रता का विचार सर्वोपरि रहता था। उस क्रिया को अपवित्र समझा गया, जिसे निसिद्ध ठहराया गया था। जो इस नियम का उल्लंघन करते थे उन्हें अस्पृश्यता के साथ जोड़ दिया जाता था।

गन्दे व्यवसाय अथवा कर्मः कसाई, बहेलिया, केवट, व्याध, धोबी इत्यादि कर्म को गन्दा बताया गया है तथा इन्हें छूने पर स्नान की बात कही गयी है। आज के युग में भी हम पाते हैं कि कई प्रकार की छोटी अस्पृश्यताओं में, गंगा जल छिड़क लेने से व्यक्ति स्वयं को शुद्ध मान लेते हैं। कुछ तरह के अस्पृश्यता के लिए स्नान करना, कुछ प्रकार के अस्पृश्यता के लिए वस्त्र सहित स्नान करने, एवं कुछ प्रकार की अस्पृश्यता के लिए घर को भी गोबर से लीपकर शुद्ध करने की परम्परा है।

मनोवैज्ञानिक एवं धार्मिक धारणाएँः अस्पृश्यता संबंधी जो विधान बने थे वे किसी जाति संबंधी विद्वेष के प्रतिफल नहीं थे वरन् उसके पीछे कुछ मनोवैज्ञानिक, धार्मिक धारणाएँ एवं अस्पृश्य संबंधी विचार थे जो मोक्ष के लिए परमावश्यक माने गये थे, क्योंकि अन्तिम छुटकारे के लिए शरीर एवं मन से स्वच्छ एवं पवित्र होना आवश्यक है। प्राचीन हिन्दू लोग अस्वच्छता से भयाकूल रहा करते थे इस कारण तथा मोक्ष प्राप्ति की धारणा के कारण अस्पृश्यता की भावना ने जन्म लिया।

व्यवसाय वंशानुक्रमिकः जो लोग गन्दे व्यवसाय से जुड़े हुए थे बाद में उनके परिवार एवं पुत्रों को भी अस्पृश्य मान लिया गया। यह जन्मजात स्थिति बनती चली गई और चाहे वे उन व्यवसायों को छोड़ भी दें फिर उनके वंशज अस्पृश्य ही समझे जाते थे। यह स्थिति आज भी मौजूद है। इस प्रकार अनेक जातियाँ अस्पृश्य होती चली गई। मनु स्मृति की व्याख्या में मेधा तिथि का स्पष्ट कहना है कि केवल चाण्डाल ही अस्पृश्य नहीं है, परन्तु कालांतर मे अन्य जातियों को भी अस्पृश्यता ने अपनी सीमा में ले लिया।

ब्राह्मणों द्वारा कुछ जातियों का उपनयन संस्कार बन्द कर दिया जाना– डॉ0 अम्बेडकर ने ब्राह्मणों द्वारा कुछ जातियों का उपनयन संस्कार बन्द कर दिए जाने को अस्पृश्यता के विकास के लिए उत्तरदायी माना है। उनका कहना है कि शुद्र मूलरूप से आर्य जातियों में से ही थे जो सूर्यवंशी थे जो क्षत्रियों की एक मुख्य शाखा है। जाति व्यवस्था में शुद्रों का गिरकर निम्नतम अवस्था में आ जाने का कारण यह है कि उनका ब्राह्मण ने शुद्रों को जाति से बहिष्कृत कर दिया और उनका उपनयन संस्कार बन्द कर दिया। उपनयन आर्यो का एक मुख्य संस्कार था यह संस्कार बच्चों को शिक्षा से जोड़ता था।

उपनयन कर दिया गया और इसी आधार पर उन्हें धर्मशास्त्र पढ़ने से भी रोक न संस्कार बंद हो जाने के कारण ये बहिष्कृत जातियाँ ब्राह्मणों से दूर होती चली गई और शिक्षा के अभाव में धीरे–धीरे इनका ज्ञान और संस्कार भी लुप्त होते चले गये। ब्राह्मणों के साथ इनके झगड़ों एवं इन्हें इस रूप में बहिष्कृत किये जाने पश्चात् अन्य जातियों ने भी इनके साथ यही व्यवहार प्रारंभ किया और धीरे–धीरे ये शुद्र वर्ण निम्नतम स्थिति में पहुँच गए। अम्बेडकर का यह विचार कई अर्थों में सत्य प्रतीत होता है। सम्भवतः यह इसी स्थिति की देन है जिसमें शुद्र जातियों का उपनयन संस्कार बन्द किया गया। परिस्थितिवस ये संस्कारहीन जाति समूह धीरे–धीरे अस्पृश्य जातियों के रूप मे बदलते चले गये।

पवित्रता का विचार– घूरिये के अनुसार–" पवित्रता का विचार चाहे वह व्यावसायिक रहा हो या संस्कारी जाति व्यवस्था के मूल में जो पाया जाता है, वही विचार अस्पृश्यता व्यवहार में भी पाया जाता है। यह तथ्य कि जब मानव का निर्माण ब्रह्मा ने किया ता अंत में अपने चारणों से शुद्र को पैदा किया पुनः इसके पश्चात ब्रह्मा ने संस्कारी एवं व्यवसायिक विचारों की पवित्रता को मांस व रक्त

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-I, Issues-35, YEAR-Jant-Mar. 2025

से एक स्वरूप देकर मूर्तमान बना दिया और यही अस्पृश्यता का सिद्धान्त और व्यवहार बन गया।" घूरिये के इस सिद्धांत को जाति व्यवस्था के उत्पत्ति के दैवीय सिद्धान्त के साथ जोड़ा जाता है। पत्रिता का जो विचार था वह तीनों उच्च वर्ग के साथ जोड़ दिया गया और अपवित्रता का विचार शुद्रों के साथ जुड़ गया।

आर्यों का भारत आगमन– ए0आर0 देसाई अस्पृश्यता के उद्गम को आर्यों द्वारा भारत की विजय से जोड़ते हैं। उनके अनुसार "ऐतिहासिक रूप से अस्पृश्यता आर्यों की भारत विजय का सामाजिक प्रतिफल है। सामाजिक अन्तः क्रिया की प्रक्रिया में पराजित हुए स्थानीय लोगों का बड़ा भाग आर्यों में ही मिल गया। इसमें जो सबसे पिछड़ा और दलित वर्ग था, वह ऐसा प्रतीत होता है, वंशानुगत रूप से अछूत जातियों के रूप में परिणत हो गया। इस प्रकार घूरिये महोदय ने अछूतों की उत्पत्ति को आर्यों के भारत आगमन से जोड़ कर देखने का प्रयास किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. हट्टन, जे0 एच0 (1963) : कास्ट इन इण्डिया, ऑक्सफोर्ड यूनिर्सिटी प्रेस, पृ0 सं0 207.
2. स्टीफन, फुक्स (1981) : एट द बोटम ऑफ इण्डियन सोसायटी : द हरिजन एण्ड अदर लॉ कास्टेज, नई दिल्ली, मुंशीराम मनोहरलाल, पृ0 सं0 – 15.
3. एहबै दुवैम जे0 ए0 (1959) : हिन्दू मेनर्स, कस्टम एण्ड क्रिमोनिज, ऑक्सफोर्ड क्लेरण्डो, पृ0 सं0 50.
4. देवेन्द्र फल सिंह (2009) : हिन्दू अछूत जातियों में छुआछूत, कॉमनवेल्थ पब्लिशर्स प्रहलाद स्ट्रीट, असांरी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, पृ0 सं0 14–46.
5. बी0 आर0 अम्बेडकर ()1952 : हू वेयर द शुद्रा, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई पृ0 सं0 – 360.
6. घूरिये, जी0 एस0 (1969) : कास्ट एण्ड रेस इन इंडिया पोपुलर बुकडिपो, बम्बई, पृ0 सं0 – 307.
7. ए0 आर0 देसाई (1966) : सोशल बैकग्राउन्ड ऑफ इंडियन नेशनलिज्म, पोपुलर प्रकाशन बम्बई, पृ0 सं0 – 263.

*****